॥ श्री ॥

जगदीशमहात्म

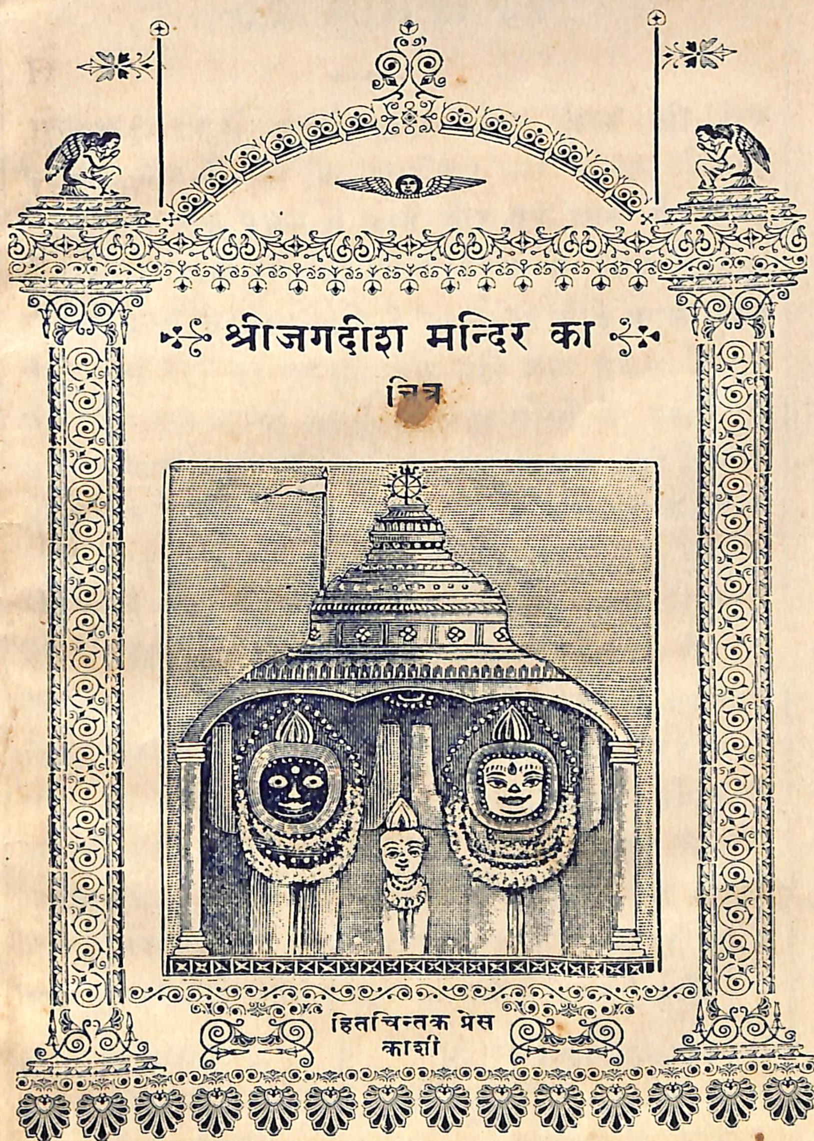
सचित्र

काशीस्थ पं० शुकदेव शर्मा कृत
सरल सुन्दर हिन्दी भाषानुवाद

जिसे
पंडित रघुनंदन पांडे ने
लोकोपकारार्थ छपाकर प्रकाशकिया

श्रीकाशी ।
हितचिन्तक यन्त्रालयमें मुद्रितहुआ

दूसरी बार ४००० } 1904 { मूल्य ।) आना


श्रीजगदीश मन्दिर का
चित्र
हितचिन्तक प्रेस
काशी

भूमिका



भारतवर्ष में सब से पवित्र और श्रेष्ठ श्री क्षेत्र जगन्नाथ क्षेत्र हैं जहां कि चारोंवर्ण चारों आश्रम सैकड़ों पंथाई लोग एक पत्तल में खाते और एक घाट में पानी पीते हैं और इस पुरी का दर्शन करने के लिए सैकड़ों हजारों कोस से लोग आते हैं परन्तु वह थोड़े काल रहने के कारण वहां का सम्पूर्ण हाल नहीं जान सकते हैं और जो कोई कुछ जानते भी हैं वह पंडा लोगों के स्वार्थ में सब भूलकर अपना धन धर्म गमा घरको चले जाते हैं और वहां जाकर पछताते हैं। इन सब दोषों को दूर करने के लिए हमने ३ मास इस पुरी में रहकर यहां का कुछ २ भेद जान और अनेक (संस्कृत, बंगला) आदि पुस्तकों का सारांश लेकर यह जगदीश महात्म लिखा है कि जिसके द्वारा यात्री लोग सब विघ्नों से बच श्रीजगन्नाथ स्थित सम्पूर्ण देव यात्रा तथा तीर्थ स्नानादि कर सकें प्रथम तो अभी तक इसका महात्म भाषानुवाद सर्वोपकारी छपाही नहीं यदि छपे भी हैं तो अत्यन्त मलिन अवाच्य अक्षर तथा टूटी फूटी भाषा में है परन्तु हमारा यह सचित्र सुन्दर सरल हिन्दी भाषानुवाद महात्म बम्बइया टाइप तथा सुन्दर मोटे और चिकने कागद में छपा है इति—

प्रकाशक
रघुनन्दन प्रशाद पांडे
दुर्गाघाट काशी

आप लोगों का शुभानुध्यायी
काशीनिवासी पं. शुकदेव शर्म्मा
रामघाट श्री काशी

श्रीः ।

श्री जगदीश महात्म ।

प्रथम अध्याय ।

श्रीगणेशायनमः । सरस्वत्यैनमः । विमलायैनमः ।

श्री गजबदन मनाय करि, शारद को धर ध्यान ।
जगदीश महातम भाषाकरौं, शंकर को उरआन ॥

एक समय नैमिषारण्य बन में सब मुनि लोग बैठे हुए थे, उस समय सब मुनियों ने मिलकर शुकदेव मुनि जी से कहा कि हे महाराज! आप सर्व शास्त्रज्ञ तथा सम्पूर्ण तीर्थ क्षेत्रों के महात्म जानने वाले हो सो कृपाकर परम पवित्र आनन्द ज्ञान को बढ़ाने वाले पुरुषोत्तम (जगन्नाथ) महात्म को कहिये जहां विष्णु भगवान ने नरलीला करने के लिये दारु मय (काष्ट) मूर्त्ति धारण की है जिसके दर्शन से प्राणिमात्र को धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष का साधन मुक्ति प्राप्त होती है, किस कारण वहां

पर भगवान ने दारुमय रूप धारण किया सो सविस्तर हाल हम लोगों को सुनाइये। इतना सुनकर शुकदेव मुनिजी अति प्रसन्न हो बोले हे मुनीगणों ! तुम्हारे ऐसे सुन्दर प्रश्न को सुनकर मैं बहुत प्रसन्न हुआ और तुम्हारे इस लोकोपकारी प्रश्न को कहता हूँ, सावधान हो कर सुनो। यद्यपि जगदीश सर्वज्ञ, सर्वव्यापी और इसी प्रकार सर्व पाप नाशक सर्वत्र हैं परन्तु इस क्षेत्र में सर्वव्यापी दीनहितकारी भगवान का दारुमय अवतार हुआ है अतएव यह क्षेत्र सम्पूर्ण तीर्थों तथा क्षेत्रों में अत्यन्त गुप्त और सर्व पापों का नाश करने वाला और समस्त पुण्यफलों को देने वाला श्रीजगदीश क्षेत्र उत्कल (उड़िया) देश में है। यह परम सुन्दर क्षेत्र दशयोजन के विस्तृत समुद्र की बालू में है जिसके बीच में नीलपर्वत और महानदी के दक्षिण किनारे से आरम्भ हो कर उत्तर किनारे तक चला गया है, यह परम-पावन क्षेत्र कहलाता है। इस भूमि का प्रत्येक

पद धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष का देने वाला है, हे मुनीश्वरों ! उसी क्षेत्र में नीलद्ध्वजधारी गरुड़ध्वज भगवान् सर्वदा शान्तिरुप बैठे रहते हैं, ऐसे भुक्ति, मुक्ति, फलदायक क्षेत्र में वही मनुष्य जा सक्ता है जिसका मन पवित्र, बुद्धि निर्मल तथा विष्णु में अत्यन्त प्रेम हो। इस स्थान में जाने से पापी दुराचारी जीव भी मुक्ति पाते हैं और वैतरणी नदी में स्नान श्राद्धादिक क्रिया कर नाभी गया क्षेत्र में (जाजपूर) वैतरणी तट-वासिनी विरजादेवी का दर्शन पूजनादि कर मन वाञ्छित फल पाते हैं और जो मनुष्य एकाम्र कानन के बाग में अति परम सुन्दर पुनीत विन्दुहद नामक सरोवर में स्नान कर परम दर्शनीय विशाल मूर्त्ति हरिहर स्वरूप कैला सपति श्रीनीलकण्ठजी का दर्शन करते हैं तथा अर्क क्षेत्र नामक स्थान में पहुंच चन्द्रभागा नदी के निर्मल जल से स्नान कर भास्कर सूर्य्यनारायण की प्रचण्ड तेजमय मूर्त्ति का दर्शन कर अपने सम्पूर्ण कायिक, वाचिक, मान-

सिक, ज्ञात, अज्ञात सम्पूर्ण पापों से रहित हो जाते हैं उसी दश योजन पृथ्वी के मध्य में नील पर्वत है जो दूरसे देखने में पृथ्वी का एक स्तन रूप ज्ञात होता है, उसी पर्वत पर तीन कोस विस्तृत शंखाकार शंखोदर पुरुषोत्तम क्षेत्र (अर्थात् श्री विष्णुभगवान का मन्दिर) है तथा साक्षात् विष्णु स्वरूप कल्पवृक्ष है और इस वृक्ष के नीचे की ओर वायुकोण में सुविख्यात रोहिणी कुण्ड है जिसके दर्श, स्पर्श तथा मार्जन से प्राणियों के देह तथा मन शुद्ध और पवित्र हो जाते हैं जिसके द्वारा प्राणी अपने चर्म चक्षुओं से नीलद्रुध्वज भगवान का दर्शन पाकर मोक्ष पदको पाते हैं और उस वृक्ष से कुछ दूर वायुकोण की ओर देवराज माधव और उनके दक्षिण नरसिंह जी का मंदिर है जिनके दर्शन आदिका फल अकथनीय और प्रशंसनीय है जहां पर किंचित जपदानादि करने से असंख्य फल लाभ होता है और उसी के समीप सम्पूर्ण फलोंका दाता

ज्ञान वैराग्य का बढ़ाने वाला कामाक्षा तथा क्षेत्रपाल का मंदिर है जिसके कुछ दूर पर सम्पूर्ण जीवों को भुक्ति मुक्ति देने वाली परम पवित्र आदिशक्ति विमलादेवी निवास करती हैं और उसी जगह मणिकर्णिका, कपालमोचन आदि तीर्थ प्रस्तुत हैं जिनके दर्शन से ब्रह्मह-त्यादि पाप नाश होते हैं और समुद्र के तीर नारायण साक्षात् कैलासपति यमेश्वर नाम से प्रसिद्ध हैं जिनका दर्शन पूजन करने से कोटि-लिङ्ग के दर्शन पूजन का फल प्राप्त होता है। उसी स्थान के सन्निध चामुण्डा, काली तथा कल्पवृक्ष भी हैं जिनका नाश महाप्रलय के समय भी नहीं होता और इस स्थान के दक्षिण ओर श्वेतगंगा और मत्स्यरूपी जनार्दन विष्णु भगवान और श्वेतरूपधारी महादेव विराजमान हैं जिनके दर्शन से अज्ञान तिमिर नाश हो मन स्वच्छ होकर विष्णु भगवान के चरणक-मलों में अचल प्रेम प्राप्त होता है और उसी के दर्शन से क्षेत्रकृत सम्पूर्ण पाप नष्ट हो वा-

जपेय यज्ञका फल लाभ होता है और उस वृक्ष के नीचे वटेश्वर तथा कुछ आगे परम सुन्दरी द्वितीया शक्ति मंगलादेवी और वट के दक्षिण ओर दक्षिण मुख गणेशजी विराजमान हैं जिनके दर्शन से सम्पूर्ण प्राणियों के विघ्न नाश होजाते हैं। नीलगिरी के पूर्व दिशा में मरीचिका देवी और ईशान कोण में जगद्गुरु विरूपाक्ष ईशानेश्वर महादेव सुशोभित हैं और उसी जगहपर आदिशक्ति शंकर की प्रिया अर्द्धाङ्गिनी विरजादेवी विराजमान हैं और शंखाकार के मध्य भाग में विष्णु भगवान, अग्र भाग में नीलकण्ठ महादेव और पृष्ट भाग में मंगलादेवी विराजमान हैं । इस शंखाकार क्षेत्र वटवृक्ष के वायु कोण में महान् तपस्वी श्री मार्कण्डेय जी तथा मार्कण्डेय तीर्थ (सरोवर) है जिसमें मार्जन स्नान करने से मनुष्य आवागमन से रहित वा दीर्घायु हो जाते हैं । ऐसे उत्तम अन्यान्य तीर्थ देवताओं से संयुक्त श्रीक्षेत्र (जगन्नाथपुरी) भारतवर्ष

में प्रख्यात है जहां श्रीनीलमाधवजी साक्षात् विष्णु अवतार धारण किए विराजमान हैं जिनके दर्शन, पूजन के लिये देवता लोग भी स्वर्ग से नित्य प्रति आते हैं। उस क्षेत्र के पश्चिम ओर सबररायल नामक (सबर लोगों का) स्थान है जहां सबर लोगों के अधिपति सुविख्यात विश्वावसु नामक सबरने नीलमाधव की मूर्त्ति को स्थापन कियाथा। वही जाती अभी तक उस वृहद् स्थल और मंदिर के कुछ कार्य्याधिकारी हैं।

एक समय संसार के प्रलय रूपी सागर में बहते हुए ब्रह्माजीने विष्णु भगवान के उस नीलाचल पर्वत को देख अत्यन्त आश्चर्यित हो वहां पर जा भगवान की अनेक स्तुति पाठ कर भगवान से बिदा हो कर जातेही थे कि उन्हों ने देखा कि एक काग अत्यन्त तृषित और दुर्बल वहां पर आया और उस पवित्र रोहिणी कुण्ड में जलपान तथा स्नानादिकर विष्णु भगवान के दर्शन आनन्दमें निमग्न हो उस स्वर्णबालू में लोट पोटकर अपने शरीर को छोड़ कर शंख

चक्र धारण किए साक्षात् विष्णु स्वरूप हो भगवान के समीप जा खड़ा हुआ उसी समय वहां विचारते हुए यमराज भी आ पहुंचे और वे इस चरित्र को देख अत्यंत दुखित हो अपना अधिकार छूटता समझ विष्णुभगवान की स्तुति करने लगे तब भगवान नीलमाधव यमराज को विह्वल और खेदित देख ईशत हास्यमुख से लक्ष्मी की ओर देखने लगे । भगवान के हृदय भाव को जानने वाली आदि-माता लक्ष्मी भक्तिवत्सल भगवान की ओर से यमराज को समझाने लगीं कि हे यमराज ! यहां की बातों पर तुम इतने शोकाकुल तथा चिन्तित न हो, यह पुरुषोत्तम क्षेत्र सम्पूर्ण जगत की सृष्टी से वहिर्गत है, इस क्षेत्र में महा विष्णुभगवान की प्रबल मायाके कारण ब्रह्मा विष्णु रुद्र किसी की माया नहीं लगती, तुम सब लोगों को इस क्षेत्र को छोड़ सर्वत्र अपने अपने शासन का अधिकार है । सो हे यम! तुम अपना दुःख दूरकर शोच को छोड़ अपने कार्य्य में लगो।

इस क्षेत्र में कीट पतङ्ग पशु पक्षी यावत देह-धारी मुक्ति लाभ करते हैं अतएव इस क्षेत्र के निवासी तथा यात्री लोगों पर अधिकार छोड़ सम्पूर्ण लोक में अपना शासन करो। हे सूर्य्य पुत्र ! इस पुरी में आकर जो मनुष्य समुद्रादि तीर्थ यात्रा कर श्री महाविष्णु नीलद्ध्वज (जगन्नाथ) जी के दर्शन करते हैं वह सम्पूर्ण पापों से मुक्त हो मोक्ष पाते हैं । इतना बचन सुन यमराज भगवान तथा लक्ष्मी जी की अनेक प्रकार स्तुती कर बोले कि हे माता ! आपके बचन सुन मेरे संशय और दुःख दूर हुए अब आप कृपाकर ऐसा बरदान दीजिये जिसमें मैं भी आप के चरणकमलों का सेवन कर सकूं इतना सुन यमराज के अत्यंत प्रेम तथा भक्ती से बद्ध हो यमराज को ऐसाही बरदान दिया। लक्ष्मी जी के ऐसे सुंदर सरल बचन को सुन प्रसन्न हो यमराज यमपुर को चले गए हे मुनिगणों ! इस क्षेत्र में भगवान् मध्यान्हतक काष्टमय मूर्ति धारण किए और मध्यान्होत्तर मनुष्य स्वरूप

धारण किए रहते हैं । यह क्षेत्र विष्णुभगवान की अनेक नरलीला तथा अनेक कार्य्य कलापों से भगवान को अत्यन्त प्रिय है अतएव यह क्षेत्र सम्पूर्ण क्षेत्र तथा तीर्थादिकों से अधिक तथा सुलभ रीति से मोक्षफल (आवागमन से रहित) फल को देने वाला है जिस क्षेत्र का महात्म ब्रह्मा, रुद्र, तथा यम आदि सुनकर अत्यंत संतुष्ट हो अपने स्थान को चले गए और जिस स्थान में वास करने के लिये ब्रह्मा, रुद्र, यम तथा मार्कण्डेय ऋषि प्रार्थी हुए ऐसे पुनीत सर्व श्रेष्ठ जगदीश क्षेत्र का जो प्राणी दर्शन करेंगे वह आवागमन से रहित हो विष्णु भगवान के समीप रह अपना जीवन लाभ करेंगे इतना कह लक्ष्मीजी चुप हो गईं ॥

इति जगदीश महात्म्य प्रथमोऽध्याय समाप्तः ॥

अथ द्वितीय अध्याय ।

इतना सुनकर शौनकादि ऋषि बोले कि हे ऋषिराज सूतजी महाराज ! आपके इस

महात्म्य को सुनकर हम सब लोग अत्यन्त आनन्दित हुए अब आप कृपाकर कहिये कि इस अपूर्व गुप्तक्षेत्र का प्रकाश किस प्रकार हुआ और किसने इस दारुमय मूर्त्ति को स्थापन किया जिससे यह क्षेत्र सर्व साधारण संसारी प्राणियों को प्राप्त हुआ है। ऐसा सुन सूतजी बोले कि हे मुनिगणों ! हम उस पवित्र क्षेत्र का शुभचरित्र कहते हैं तुम लोग मन लगा कर सुनो। सतयुग में एक सदाचारी सर्वश्रेष्ठ सत्यवादी धर्मज्ञ धर्मात्मा ब्रम्हा की पांचवी पीढ़ी का उत्तराधिकारी सर्व विद्याओं का जानने वाला सम्पूर्ण ऐश्वर्य्योंका भोक्ता सदा तपस्वी और परम वैष्णव पितृभक्त प्रजापालक सर्वज्ञ अतिथिपूजक सद्गुणोंसे युक्त इन्द्रद्युम्न नामक महीपति नाना रत्नोंसे युक्त अमरावती के तुल्य मालव देशकी अवन्तिका पुरीमें वास करता था। एक समय वह राजा ब्राह्मण तथा पुरोहितको साथले मंदिर में पूजनादिसे निवृत्त हो बैठाथा इतनेही में देखाकि एक जटिल वेष

धारी ऋषि आतेहैं। राजा ने उठकर प्रणाम तथा पूजनादि कर सन्मानपूर्वक आसन पर बिठा पूंछा हे महाराज ! आज इस दीन पर कहांसे अनुग्रह हुआ और दासके लिए क्या आज्ञा होतीहै ? इतना सुन जटाधारी ऋषिजी बोले कि हे राजन् ! मैं जो कहताहूं सो मन लगाकर सुनो। मैंने एक समय घूमते २ बहुत विकट जङ्गलों में घुस उत्कल (उड़ीसा) देश में समुद्रके तीर श्रीपुरुषोत्तम क्षेत्रको देखा कि वहां पर श्रीनीलमाधवजी विराजमान हैं। वह स्थान अति प्रशंसनीय और अभी तक गुप्तहै वहां पर एक वर्ष पर्य्यन्त रह कर देखा कि देवता लोग वहां प्रति रात्रि आकर और भगवान का पूजन कर स्वस्थान को चले जाते हैं, हे राजन्! तुमको परम वैष्णव तथा सत्पात्र देख उस क्षेत्रको तुम्हारे आगे प्रगट करताहूं। हे राजन्! देवतादि स्वर्गसे आकर जिनकी पूजा करके अपना अभीष्ट सिद्ध करते हैं ऐसे विष्णु भगवानका दर्शन तुमको अवश्य करना चाहिए

और वहीं पर रोहिणी नामक कुण्ड है जिसमें स्नान तथा मार्जन करनेसे यावत् प्राणि मुक्ति पाते हैं। जटाधारी तपस्वीकी इतनी बातें सुन राजा ने उनसे अधिक प्रसन्नहो वारंवार दण्डवत कर उनकी पूजा करगलेमें माला पहिराई। तपस्वीजीने पुनः वही माला राजा को प्रसाद स्वरूप प्रदान की। महाराजा इन्द्रद्युम्न ने विष्णु नीलमाधवजी की प्रसादरूपी माला तपस्वीजीसे पाकर भक्तवत्सल भगवान तथा उस माला को सराह जटाधारी तपस्वीसे बोला कि हे प्रभो ! वह जगदीश क्षेत्र कौन दिशामें है और वहां जाकर श्रीनीलमाधवका दर्शन आदि किस प्रकार होता है सो कृपापूर्वक कहिए, इतना सुन जटिल मुनिजी बोले कि हे राजन् ! वह जगदीश क्षेत्र लवणसिंधु के उत्तर तटमें औड्र (उत्कल, उड़ीसा) देशमें है। उसी पवित्र देशमें यह उत्तम महान्क्षेत्रहै जिसकी महिमा नारदादि सर्वदा गायन कर अपना चित्त पवित्र व जीवन सुफल करतेहैं और

इस पवित्र क्षेत्रके एक कोसमें विस्तृत कल्पवृक्ष तथा उसके पश्चिम ओर सबरादियोंके निवासस्थानहैं, इन्हीं सबरादि स्थानोंकी ओर से एक सूक्ष्म पंथ (पगडण्डी) से श्रीनीलमाधव के दर्शनका मार्ग हैं । जो प्राणी इन नील माधवका दर्शन करते हैं वह जीवन से मुक्त हो जाते हैं और उनको फिर संसारका आवागमन दुःख नहीं होता इसलिए हे राजन् ! तुमको परम वैष्णव भक्त जानकर कहता हूं कि तुम सकुटुम्ब जाकर वहां वास करो। वह स्थान तुम्हारे ऐसे पुण्यात्मा विष्णु तथा ब्राम्हण भक्तों केही रहने योग्य है। मैं तुमसे रत्न, मणि, ग्राम आदि विभव याचना करने नहीं आया केवल इस क्षेत्र का उपदेश तथा सूचना देने आया हूं इतना कहते कहते जटिल मुनि भगवान सभा में से सबके देखते २ अन्तरध्यान होगए । उन के अन्तरध्यान होतेही राजा बड़ा विस्मित और विकल हो पृथ्वीमें गिरपड़ा। राजा को गिरते देख राजाका पुरोहित तथा अन्य समस्त ब्रह्म

मण्डलीने राजाको अनेक प्रकार समझाकर सन्तोषिक किया तब राजा बोलाकि हे पुरोहितजी महाराज ! आप तथा सम्पूर्ण ब्राह्मणों की कृपासे मेरी सम्पूर्ण मनोकामना सिद्ध हुई परन्तु जटिल भगवानके उपदेशसे अभी उस क्षेत्र दर्शनकी अभिलाषा बाकी है सो हे महाराज ! पूर्ण करो क्योंकि यह कार्य जबतक न होगा तबतक मुझको किसी प्रकारकी इच्छा उत्पन्न नहीं होगी और आशा है कि मेरा यह कार्य्य भी आपके द्वारा सुलभमें हो जायगा । इतना सुन पुरोहितजी बोले कि हे राजन् ! आप धैर्य्य धरो और उस क्षेत्रके जाने वा दर्शन करनेका उपाय मैं तुमको बताता हूँ । विद्यापति मेरा छोटा भाई देश भ्रमण तथा अन्यान्य तीर्थ शोधन में अति निपुण है उसको भेज उसका शोधन कराइये तब हम सब वहां जाकर वास करेंगे और वहां अश्वमेधादि यज्ञकर श्रीपुरुषोत्तम भगवान का दर्शन करेंगे पुरोहित की इतनी बातें सुनकर राजा इन्द्रद्युम्न

सम्पूर्ण ब्राह्मण तथा पुरोहितजीसे विदा हुआ और उनके कथनानुसार उनके छोटे भाई विद्यापति के पास जा पहुंचा और अनेक प्रकार प्रार्थना कर बोला कि हे विप्रवर ! आप बड़े विद्वान् तथा देशभ्रमण में अत्यन्त चतुर हो ऐसा सुन मैं आपके समीप आया हूं कि आप मेरे ऊपर अनुग्रह करके उत्कल देश में जो श्रीनीलमाधवजी का क्षेत्र है उसका शोधन कर उस पवित्र नीलमाधव (जगन्नाथ) क्षेत्र का हाल मुझसे आकर कहिए । ऐसा कह राजा इन्द्रद्युम्न गद्गदवाणी से बिन्ती करता हुआ विद्यापति के सन्मुख साष्टांग पड़गया । राजा इन्द्रद्युम्न की ऐसी दशा देख विद्यापति अनेक प्रकार धैर्य्य देकर समझाने लगा कि हे राजन् ! आप धैर्य्य धरो, मैं आपके कार्य्य का शीघ्रही उद्योग करता हूं और उसका समाचार शीघ्र ही कहूंगा इतना कहकर वह अपने को अनेक प्रकार धन्यवाद देकर सराहने लगा कि जिन नीलमाधवके दर्शन की अभिलाषा देवता लोग

करते हैं उन्हीं नीलमाधव का दर्शन मैं जाकर स्वचर्मचक्षुओं द्वारा प्राप्त करूंगा इसी प्रकार अपने भाग्य को सराहता हुआ राजा इन्द्रद्युम्न से बिदा हो नीलमाधव भगवान के दर्शन आशा में निमग्न हो दक्षिण समुद्र की ओर चला। कुछदिन बाद जाते जाते महानदी से पार हो सबर नामक बनमें जा पहुंचा जहां विष्णु भगवान का परम भक्त विश्वावसु नामक सबर रहता था। विद्यापति को उस भयानक जङ्गल में अकेला घूमते देख विश्वावसुने विद्यापति के पास जा अभिवादनान्तर पूंछा कि हे विप्रवर ! आप इस भयानक जङ्गल में कहांसे और किसलिए आये हो और आपका क्या नाम है ? विश्वा वसु की मधुर वाणी सुन विद्यापति बोला कि हे विप्र ! मैं अवन्तिका पुरी के राजा इन्द्रद्युम्न के पुरोहित का छोटा भाई विद्यापति हूं, मुझको राजाने श्री नील माधव क्षेत्र का शोधन करने के लिए भेजा है। हमारे महाराज की इच्छा है कि उस क्षेत्र

में सकुटुम्ब तथा ससैन्यादि वास करे इसीलिए मैं इसका संपूर्ण मार्गादि शोधन करने के लिए आया हूं सो हे विप्रदेव! उन नीलमाधव का दर्शन तथा उस क्षेत्र का सुगम मार्ग मुझको बता दीजिए। इतना सुन विश्वावसु विद्यापति से बोला कि विप्रवर! आप इस समय मेरे गृह पधारकर रातृ को विश्राम कीजिए तदनन्तर प्रातःकाल आपको श्रीजगदात्मा जगदाधार जगद्बन्धु जगदीश श्रीनीलमाधव का दर्शन होजायगा। उस की ऐसी बातें सुन विद्यापति बोला कि हे विप्रवर! हम बिना नीलमाधव भगवान का दर्शन किए विश्राम तथा आहारादि नहीं करेंगे इसलिये आप कृपाकर मेरे सर्वस्वसाधन नीलमाधव भगवान का दर्शन मुझको शीघ्र करा दीजिये। विद्यापति का अत्यन्त आग्रहयुक्त वचन सुन विश्वावसुने विद्यापति को साथ ले कर एक छोटीसी सुगम पगडंडी के रास्ते हो रोहिणीकुंड में स्नान करा वटवृक्ष को आलिङ्गन कराता हुआ नीलवर्ण स्वर्णकान्ति सर्वाङ्ग

सुन्दर सर्वालंकारविभूषित जगदात्मा श्रीनील-
माधवजी का दर्शन कराया । विद्यापति ने
साक्षात् महाविष्णु नीलमाधव के दर्शन कर
स्तुति करना आरम्भ किया कि हे देव देवेश !
आप जगदात्मा जगदाधार सम्पूर्ण देवों के
अचिन्तनीय नीलमाधव इस क्षेत्र में पूर्णकला
से विराजमान हैं सो मैं आपको प्रणाम करता
हूं । आपकी महिमा तथा यश कीर्ति का वर्णन
शेष, शारदा, गणेश, महेश भी करने को अ-
समर्थ हैं और आपके दर्श पर्श तथा पूजनादि
की इच्छा इन्द्रादि देवता तथा गुणानुवाद नार-
दादि परम ज्ञानीलोग करते हैं ऐसे आप के
दर्शन कर हम कृतार्थ हुए और इस परमानन्द
में निमग्न हो कर आप को वारंवार दंडवत
करते हैं । इसी प्रकार विश्वावसु तथा विद्या
पति भगवान की स्तुति कर परमानन्द से मुग्ध
हो बैठ गए । तदनन्तर विश्वावसु विद्यापति
से बोला कि हे द्विजराज ! रात् अधिक हो रही
है, जङ्गल का अति कठिन मार्ग रात्को बड़ा

दुर्गम होता है सो अब शीघ्रही स्थान को पधारिए। विश्वावसु की इतनी बातें सुनकर विद्यापति बोले हे ब्रह्मण्य ! मैं आज की रातृ यहां ही विश्राम करूंगा, आप गृहको पधारिए। फिर विद्यापति बोला कि हे विप्रवर ! आप ऐसा क्यों कहते हो, यहां पर संपूर्ण भूमि श्री नीलमाधव भगवान ही की है और यहां पर रातृ को सिंह, व्याघ्रादि जन्तु आक्रमण करते हैं इस कारण यहां कोई नहीं रहता। ऐसा कह विद्यापति का हाथ पकड़ विश्वावसु उसे घर को ले आया। और वहां आकर दोनों ने नील माधव भगवान का निर्माल्य (प्रसाद) आनन्दपूर्वक भक्षण कर विद्यापति बोला कि हे द्विजवरमित्र ! यह प्रसाद नीलमाधव भगवान को कौन किस प्रकार समर्पण करता है सो कहिए इतना सुन विश्वावसु बोला कि हे मित्र द्विज ! श्रीनीलमाधव भगवान का दर्शन पूजनादि करने के लिए अमर (देवता) लोग रातृ को आते हैं वेही यह अन्यान्य प्रकार

का भोग ला श्रीनीलमाधव भगवान को समर्पण करते हैं जो प्रसाद प्रातःकाल हमको प्राप्त होता है और जिसके द्वारा हम अपना जीवन निर्वाह तथा अतिथि सत्कारादि कर अपनी धर्मरक्षा करते हैं। सूतजी की इतनी कथा सुन ऋषिलोग बोले कि हे सूतजी महाराज! इस कथा को सुनकर हमलोग अत्यन्त प्रसन्न हुए और आगे विद्यापति ने विश्वावसु से क्या कहा और राजा इन्द्रद्युम्न ने किस प्रकार वहां जा वास कर भगवान की दारुमय (काष्ठ) मूर्त्ति स्थापन की सो सविस्तर हाल कृपापूर्वक हमलोगों से कहिए। तब सूतजी बोले कि विश्वावसु की ऐसी बातें सुनकर विद्यापति आनन्द मग्न हो उसी विश्वावसु को भगवान स्वरूप देख आलिङ्गनकर बोले कि हे मित्रवर! जिस क्षेत्र में रहने तथा नीलमाधव भगवान के दर्शनसे प्राणिमात्र मुक्त तथा भगवान स्वरूप हो जाते हैं ऐसे क्षेत्र में आप सर्वदा वास कर अपना जन्म सुफल कर रहे हो।

अहो देवदेवेश ! आप अमर प्रशंसनीय तथा संपूर्ण काम, क्रोध, लोभ, मोहादि दोषों से रहित साक्षात् विष्णुस्वरूप हो। धन्य हमारे भाग्य कि मैंने आपका दर्शन कर अपना पूर्व-जन्मार्जित पापों का नाश कर अपना जन्म सुफल किया। अब आप कृपापूर्वक ऐसा आशिर्वाद प्रदान कीजिए कि जिसमें हम अपने राज समाज सहित इस क्षेत्र में वास कर नील-माधव भगवान की सेवा तथा आपलोगों के दर्शन लाभ करें। इतना सुनकर विश्वावसु बोले हे मित्रवर ! आप किसी बातकी चिन्ता तथा शोच न कर यह निश्चय मानें कि यहां आपके राजा इन्द्रद्युम्न सकुटुम्ब रह यज्ञादि द्वारा भगवान की दारुमय मूर्ति स्थापन कर इस क्षेत्र का और भी महात्म बढ़ावेंगें, यह वृत्तान्त पूर्वकाल में भगवान ने ब्रह्मा जी से कहा था अतएव आप इस बात पर निश्चय राखिए कि आपके राजा इन्द्रद्युम्न का अभीष्ट पूर्णहो तुम लोगों की यशकीर्ति युग युगोंतक

फैली रहेगी। हे मित्र! अब रात् अधिक व्यतीत हुई आप विश्राम करो और मैं भी जाता हूं इतना कह विश्वावसु अपने विश्राम स्थान को चलदिए और विद्यापति भी अत्यन्त श्रमित होनेके कारण नीलमाधव का ध्यान धर निद्रा देवीके वशीभूत हो गया। विद्यापती को निद्रा लगने के थोड़ी देर बाद भक्तवत्सल नीलमाधव भगवान ने निद्रित विद्यापती से स्वप्न द्वारा कहा की हे विप्रवर। मैं तुमसे बहुत संतुष्ट हूं अब तुम जाकर अपने राजा (इन्द्रद्युम्न) को शीघ्र ले आओ, उस राजाके यहां आने से तुम लोगों का भी अभीष्ट पूर्ण हो जायगा। इतना कह भगवानने विद्यापती को एक पुष्पमाला राजा इन्द्रद्युम्न के लिये दे अन्तरध्यान हो गए। इस सुन्दर स्वप्न को देखतेही विद्यापति उठ बैठा और उसी समय अपने मित्र (विश्वावसु) को बुलवाकर अपने स्वप्न का यथार्थ हाल सु- नाया विश्वावसु ने भी अनेक प्रकार उसकी तथा राजा की प्रशंसा कर कहा कि हे मित्र ! अब

आप विलंब न कर शीघ्रही राजाको लेआओ इतना सुन विद्यापती नीलमाधव के स्वप्न से अत्यन्त प्रसन्न हो विश्वावसु को बारम्बार प्रणाम कर हृदय से लगा राजा को लिवालाने के लिये चला । राजा इन्द्रद्युम्न ने विद्यापती का आगमन सुन बड़ा आनन्दमान बारम्बार प्रणाम करता हुआ विद्यापति का स्वागत करने के लिए चला और विद्यापती के मिलने पर अपने गृह में ला सुन्दर पवित्र आसन दे पूछने लगा कि हे महानुभाव विद्यापते ! आपने नील माधव भगवान का दर्शन तथा उस क्षेत्र का मार्ग किस प्रकार पाया सो सविस्तार हाल कृपापूर्वक मुझसे कहिये । जटिल मुनि के कथनानुसार उस अपूर्व क्षेत्र में संपूर्ण पापनाशक अभिज्ञवरप्रद श्रीनीलमाधव भगवानजी संपूर्ण कलाओं से युक्त किस प्रकार विराजमान हैं सो सब हाल विस्तार पूर्वक कहिये । राजा इन्द्रद्युम्न की इतनीबातें सुन बिद्यापति बोला कि हे नृपश्रेष्ठ राजा इन्द्रद्युम्न ! तुम्हारे

यश कीर्ति और पुण्य के प्रताप से उस क्षेत्र में जाकर जटिल मुनि के कथनानुसार नीलमाधव भगवान का दर्शन हुआ और हमारे नवीन मित्र विश्वावसु की सहायता से उस काम में अत्यन्त सफलता प्राप्त हुई। अब वहां का हाल सविस्तर कहता हूं चित्त लगाकर सुनो। जटिल मुनि के कथनानुसार महान् महान् दुर्ग पर्वत तथा नदी नाले पार होता हुआ उस महानदी के दक्षिण ओर समुद्र तटपर जा श्रीक्षेत्र (नीलमाधव भगवान) का स्थान देखा। उस अगम्य स्थान का पथ तथा दर्शन होना दुर्लभ था परन्तु श्रीनीलमाधव भगवान की कृपा से वहांपर सत पथ गामी भगवत् चरणानुरागी परोपकारी विश्वावसु नाम का एक ब्राह्मण मिला जिस्के द्वारा उस अगम्य पर्वत का मार्ग सुलभ में प्राप्त होगया। उसी दिन रात् को दीनहितकारी त्रयतापहारी नीलमाधव भगवानजी ने यह पुष्पमाला आपके लिए देकर स्वप्न में कहा कि हे विप्रवर

अपने राजा (इन्द्रद्युम्न) को शीघ्र ले आओ ऐसा कहकर भगवान अन्तरध्यान होगए और मैंने अपने मित्र विश्वावसु को बुला स्वप्नका संपूर्ण हाल कह सुनाया और उनसे आज्ञाले यहां चला आया। विद्यापति की इतनी बातें सुन राजा हाथ जोड़ खड़ा हो बोला कि हे द्विजवर ! आपने आज मुझको कृतार्थ किया और यह आपका अपरिमित गुणानुवाद आजन्म पर्यन्त कभी न भूलूंगा आपकी कृपा से आज मुझको संपूर्ण बातें सुलभ हुईं ऐसा कह कर भगवान का प्रसाद व माला ग्रहण कर अपने भाग्य को अनेक प्रकार सराहने लगा। इतनेही में संपूर्ण आनन्द युक्त सभामण्डप में राजा को बैठे देख तृकालज्ञ ब्रह्मा के पुत्र नारदजी आए। राजा इन्द्रद्युम्न ने नारद मुनिजी को देख सुन्दर पवित्र आसन में बैठा विविध प्रकार पूजा कर हाथ जोड़ सिर नवाकर बोला कि हे मुनिश्रेष्ठ ब्रह्म पुत्र नारदजी महाराज ! आज आपके आगमन से हमारा गृह पवित्र तथा

संपूर्ण वासना पूर्ण हुईं। आज आपने हमारे ऊपर बड़ी कृपा कर अलभ्य दर्शन दिया, अब इसी प्रकार हमको कुछ ज्ञान का उपदेश दीजिए जिस्से धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष चारों पदार्थों का साधन प्राप्त हो, क्योंकि आप तृकालज्ञ तथा परम ज्ञानी हो। इतनी बातें सुन नारदजी अत्यन्त प्रसन्न हो बोले कि हे राजन्! तुम बड़े धर्म्मज्ञ, बुद्धिमान् तथा ज्ञानी राजा हो इस कारण तुमको परमोपयोगी ज्ञान का साधन करने वाले मुक्ति साधक उपाय को बताता हूं, तुम चित्त लगा कर सुनो। इसी उपदेष से तुम्हारे संपूर्ण मनोरथ सिद्ध होंगे। उत्कल देश में समुद्र के तीर साक्षात् परब्रह्म परमेश्वर महाविष्णु नीलमाधव जी का स्थान है जहां के दर्शन पाने से प्राणिमात्र को मुक्ति प्राप्त होती है। आपतो परम वैष्णव तथा नीतिपूर्ण धीर वीर हो, आपके जाने से वह क्षेत्र अधिक फलप्रद होगा ऐसा उपदेश हमको किसी समय ब्रह्माजी ने किया है। सूतजी

बोले कि हे ऋषिगणों ! जटिल मुनि की सूचना विद्यापति का समाचार और नारदमुनी का उपदेश सुन राजा इन्द्रदुम्न ने सैनिक, मन्त्री तथा समस्त नगरवासियों को चलने के लिए नानाप्रकार के वाहन, पीनस, पालकी, अश्वादि साजकर चलने की आज्ञा दी। राजा की आज्ञा सुन मन्त्री ने अति प्रसन्न हो विष्णु भगवान् तथा नारद और अपने कुलपूज्य देव ब्राह्मण लोगों का पूजन कर ससैन्य तथा राजा के सहित नगर की परिक्रमा कर अवन्तिका (उज्जैन) पुरी से निकल चले और कुछदिन भजनानन्द से जाते महानदी के सुरम्य तीरपर सायंकाल को पार हो रात्री को वहां वास किया और प्रातःकाल होते ही नित्य कृत्यों से निवृत्त हो नारदमुनि जी के पास जा बोला कि हे महाराज ! यह कौन नदी है और कौन इसको यहां लाया और क्या इसका नाम है सो संपूर्ण हाल मुझसे कहिए। हे गुरुदेव ! इसके सुनने की हमारी बड़ी लालसा है। इतना सुन नार-

दजी बोले कि हे राजन् ! पश्चिम दिशा में विन्ध्याचल नाम का पर्वत है उस पर्वत पर किसी समय ब्रह्माजी ने विष्णु भगवान के चरण स्थापन किये थे, उन्हीं चरणकमलों से निर्गत हो पूर्व दिशाको जानेवाली महानदी नाम से प्रसिद्ध है, इस नदी का महात्म गंगा से भी अधिक है और यही नदी श्रीक्षेत्र जगन्नाथ पुरी में चक्रतीर्थ से मिली है जिस्में स्नान करने से प्राणियों के सप्तजन्मार्जित पाप नष्ट हो जाते हैं। नारद जी की इतनी बातें सुन राजा अति प्रसन्न हो आनन्द से स्नान करने लगा और स्नानादि कृया कर एकाम्र बनमें जा शिवका दर्शन व पूजन करने लगा ॥

॥ इति द्वितीयोऽध्यायः समाप्तः ॥

अथ तृतीय अध्याय ।

तब मुनि लोग बोले हे ऋषिराज सूतजी महाराज ! उस एकाम्र बन में इन्द्रद्युम्न राजा ने क्या किया और फिर वहां से किस स्थानको

यात्रा की सो संपूर्ण विस्तार पूर्वक हमलोगों से कहिए तब सूतजी बोले कि हे ऋषिगणों ! उस एकाम्र बनमें राजा इन्द्रद्युम्न ने कुछ देर बाद शंख घंटादि वाद्यों की आवाज सुन नारदमुनि जी से पूंछा कि हे महाराज ! यह कौन स्थान है और किसने इसकी स्थापना की, इस विशाल लिङ्ग हरिहर स्वरूप शिवजी का क्या नाम है सो संपूर्ण हाल विस्तार पूर्वक कहिए। इतना सुन नारद जी बोले कि हे राजन् ! एक समय कैलासपति शंकर काशी से श्रीक्षेत्र नीलमाधव के दर्शन निमित्त आए और लौटती समय इस रमणीक सुरम्य बनको देख श्रीनीलमाधव का ध्यान लगा यहां पर तपस्या करने लगे। भक्तवत्सल दीनहितकारी भगवान ने शंकर जी की तपस्या देख प्रगट होकर कहा कि हे औढरदानी कैलासपति शंकर जी महाराज ! आप किसहेतु और किसके लिए यहां घोर तपस्या कर रहे हो सो कृपापूर्वक मुझसे कहिए । इतना सुन शंकरजी बोले कि

हे भक्तवत्सल वैकुण्ठवासी आनन्द कन्द चन्द्र लक्ष्मीपति जी महाराज ! आप सबके हृदय की वाञ्छना जानने वाले हो सो आप मेरे हृदय भाव का विचार कर मुझको वरदान दीजिए। इतनासुन श्रीनीलमाधव भगवान बोले कि हे तृभुवन कैलासपति ! आजसे यह घोर भयानक वन तुम्हारे नामसे विख्यात होगा और सर्वदा तुम्हारे अर्द्धाङ्ग में बस मैं तुम्हारी संपूर्ण मनोकामनाओं को पूर्ण करूंगा। इतना कहकर नीलदृध्वज भगवान अन्तरध्यान हो गए। हे राजन् ! तभी से यह स्थान भुवनेश्वर नाम से विख्यात है। जिस समय रामचन्द्रजीने समुद्र तटपर रामेश्वरजी की स्थापना करने के लिए रुद्रस्वरूप हनुमानजी को संपूर्ण तीर्थोंका जल लेने के निमित्त भेजाथा उस समय हनुमानजी ने यहांपर आ इस विशालरूप हरिहर स्वरूप शिवजी का दर्शन कर संपूर्ण तीर्थजलों में से एक विन्दु (बूंद) जल शंकर के मस्तक में डाला उस विन्दु से सुविस्तीर्ण सर्वपापनाशक

परमपावन यह सरोवर उद्भव हुआ जिसमें स्नान करने से संपूर्ण तीर्थों का फल और इस लिङ्ग के दर्शन करने से सम्पूर्ण लिङ्गोका दर्शन फल प्राप्त होता है। इसलिए हे राजन् ! इन कैलासपति शंकर का पूजनादि कर आज यहां विश्राम करना चाहिए। नारदमुनि की इतनी बातें सुन राजा इन्द्रद्युम्न ने सकुटुम्ब तथा ससैन्य सदाशिव का पूजनादिकर अनेक प्रकार धूप, दीप, नैवेद्यादि लगा ब्राम्हण भोजनादि करा उसदिन वहांही विश्राम किया और दूसरे दिन प्रातःस्नानादि कर कैलासपति भुवनेश्वर का दर्शन करके नीलाचल के समीप भार्गवा नदीके तीर कपोतेश्वर वा बिल्वेश्वार की बालु-का मय पृथ्वी में ससैन्य वा कुटुम्ब सहित जा उतरे और कपोतेश्वर वा बिल्वेश्वर की उत्पत्ति आदि श्री नारदमुनिजी से पूंछने लगे तब नारदजी बोले कि हे राजन् ! पूर्वकाल में एक समय (द्वापर युग) में श्रीविष्णुभगवान ने पृथ्वी का भार उतारने के लिए यदुवंशी वसुदेव

के गृह में देवकी के गर्भ में जन्म लिया था तब उस समय श्रीकृष्ण भगवान अपने यदुवंशी लोगों के सहित यहां आए और लौटती समय इस स्थान में जब राक्षसों ने श्रीकृष्ण तथा यादवों को महान् दुःखदिया तब श्रीकृष्ण भगवान ने इस स्थान में रहकर इस बिल्ववृक्ष(बेल का पेड़) के नीचे शंकर की मूर्ति स्थापनकर उनसे वरदान पा यहां के सम्पूर्ण राक्षसों का नाश किया इसलिए इस स्थान वा क्षेत्र का नाम बिल्वेश्वर क्षेत्र तथा शंकर का नाम बिल्वेश्वर हुआ और एकपरम कौतुक इतिहास इन कपोतेश्वर का सुनो। एक समय श्री कैलासपति शंकरजी श्रीकाशीजी से श्रीनीलमाधव के दर्शन निमित्त यहां आए और किसी कारणवश भगवान का दर्शन न हुआ तब श्रीशंकर कैलासपति ने यहां पर आकर घोर तस्पया की यहांतक कि महादेवजी तपस्या करते करते सूखकर कबूतर की नाईं होगए तब शंकर की घोर कठिन तपस्या देख विष्णु भगवान ने

प्रसन्न हो दर्शन दिया तभी से इनका नाम कपोतेश्वर नामसे प्रसिद्ध हुआ सो हेराजन्! आप इन दोनों लिङ्गो का दर्शन तथा पूजादि श्रद्धा से करो यह दोनों लिङ्ग सम्पूर्ण कामना तथा इच्छित फल को देने वाले हैं। इतनी बातें नारदमुनि से सुन राजा इन्द्रद्युम्न ने सकुटुम्ब तथा ससैन्य उन दोनों लिङ्गो का दर्शन पूजनकर श्रीनीलमाधव के दर्शन का वरदान मांगा। सूतजी बोले कि हे ऋषिगणों! नारद जी के वचनानुसार राजा ने सम्पूर्ण कार्य्य किया और वहां से लौटतीबार राजा की बाईं आँख फड़कने लगी राजा इस असगुन को देख बड़ा चिन्तित हो नारदमुनि से पूंछने लगा कि हे महामुनि नारद जी महाराज! आज यह क्या अशकुन हो रहा है क्या मेरे किसी कार्य्य में कहींपर त्रुटिहुई? सो आप कृपाकर मुझसे कहो क्योंकि आप तृकालज्ञ सबके कर्मों के फलको कहनेवाले हो सो हे महाराज! मेरे किस कर्म से यह असगुन पैदा

हुआ ? तब नारदजी बोले कि हे राजन् ! आज तुम्हें पुत्र उत्पन्न होगा सो तुमको इन नीलमाधव का दर्शन नहीं मिलेगा और यहां के श्रीशंकरजी महाराज तुम्हारे भेजेहुए विद्यापति को अपना साक्षात् स्वरूप से दर्शन दे यहां से तभी अन्तर्ध्यान होगए हैं सो हे राजन्! तभी से यहां की स्वर्णाकृत बालू पीतवर्ण हो गई है। सूतजी बोले कि हे शौनकादि ऋषियों! नारदजी की इतनी बातें सुन राजा इन्द्रद्युम्न बेहोश हो वज्रघात की नाईं हठात् गिरपड़ा। राजा को गिरते देख चारों ओर से सम्पूर्ण लोग हा ! हा ! करते हुए राजा के पास अनेक प्रकार विलाप करने लगे। नारदजी ने सबको विकल तथा शोकित देख अनेक प्रकार सबको उपदेश तथा ज्ञान से धीरज दे राजा को होश में लाने का उपाय करवाया। अनेक प्रकार के उपचारों से राजा कुछ देर में होश में आया और नारदजी के चरणों में गिरकर बोला कि हे महाराज ! यह मेरा कौन जन्म जन्मान्तर

का पाप उदय हुआ ? हे महाराज ! अब इसका उद्धार किस प्रकार होगा सो कृपाकर आप मुझको कहिए नहीं तो मेरी प्रजादि के सहित मेरे पुत्र को देश बिदा कर दीजिए वह वहां जाकर राज्य करें मैं अब भगवान के दर्शन बिना यहां से नहीं जाऊँगा । हा ! मुझ अभागे के लिए भगवान भी अन्तर्ध्यान हो गए हा ! हा !! हा !!! अब इस शरीर को यहांही भगवान को समर्पण करूंगा इतना कह थोड़ी देर के लिए फिर बेहोश होगया तब नारदजी ने राजा को अनेक प्रकार समझा शान्ति प्रदान किया और कहा कि हे राजन् ! तुम धीरवीर हो कातरों की नाईं विकल क्यों होते हो ? तुह्मारे ऊपर विष्णु भगवान की बड़ी कृपा है ऐसा कह भगवान के तले से होते हुए सुन्दर गम्भीर स्वरूप श्री विष्णु भगवान् नरसिंहजी के मन्दिर के पास पहुंचे तब नारदजी ने राजा से कहा कि हेराजन् ! देखो यह परम पवित्र आनन्द जनक विशाल लोचन सर्वाङ्ग सुन्दर

दैत्यों के नाश करने वाले नरसिंह भगवान हैं जिनके दर्शन से अज्ञान तिमिरनाश हो ज्ञान रूपी प्रकाश होते हैं सो हेराजन् ! अब जब तक तुमको विष्णु भगवान का दर्शन न हो तब तक इन्हीं नरसिंह भगवान के पास रह इन्हीं का पूजन किया करो और यह इनके सन्मुख अति विशाल जो वृक्ष है वह साक्षात् विष्णु स्वरूप हो इस स्थान में शोभित है जिसके एक कोस की छाया में जाने से प्राणियों को मुक्ति लाभ होती है सो हेराजन् ! अब तुम यहीं पर रह कर इन दोनों की पूजा करो यही तुम्हारे वाञ्छित फल को देने वाले हैं। इस वृक्ष के पश्चिम तथा नरसिंह भगवान के उत्तरओर नीलमाधव भगवान अभी अन्तरध्यान हो श्वेतद्वीप में चले गए हैं क्योंकि भगवानको श्वेत और सिंहल द्वीप बड़े प्यारे हैं, वहीं से नीलमाधव भगवान तुम्हारे ऊपर कृपा कर यहां दारुमय रूप से व्याप्त हो तुम्हारे मनोरथ सुफल व मनोवाञ्छना पूर्णकर यहां पर नानाविधि भोग विलास करेंगे।

सूतजी बोले कि हे ऋषिगणों ! नारद जी की इतनी बातें सुनकर राजा श्रीविष्णु नरसिंह भगवान की विविध प्रकार पूजन कर स्तुति करने लगा। राजा के स्तुति करतेही वहां पर आकाशवाणी हुई कि हे राजन् ! नारदमुनिजी को ब्रह्मा ने तुम्हारे पास भेजा है इसलिए जो नारदजी कहेंगे वह तुम सत्य ब्रह्मवाणि समझना, इसमें सन्देह नहीं कि तुम को भगवान का दर्शन यहां पर अवश्य होगा सो हे राजन् ! तुम नारदजी के कथनानुसार चलो । राजा इन्द्रद्युम्न इस गम्भीर मनोहर वाणी को सुन अत्यन्त प्रसन्न हुआ और वारंवार नारदमुनिजी के चरणों में पड़ प्रणाम करने लगा । सूतजी बोले कि हे नैमिषारण्य वासीगणों ! तब नारदजी ने राजा इन्द्रद्युम्न से कहा कि हे राजन् ! पूर्वकाल में ब्रह्माजी के स्थापन किए नीलकण्ठ नाम के महादेव हैं वहां पर चलो, वहां जा कुछ काल वास करें क्योंकि यह सब स्थान सम्पूर्ण वाञ्छित फलों

को देने वाले हैं। इतना सुन राजा नारदमुनि
जी के साथ नीलकण्ठ महादेव को जा पाँचदिन
रह नित्य उनकी विविध प्रकार से पूजन करता
रहा और नारदमुनि की आज्ञानुसार राजा
इन्द्रद्युम्न ने वहां से आ एक विशाल मन्दिर
विश्वकर्मा से तैयार करवा उसमें दैत्यों केशत्रु
भक्तों के पालक हिरण्यकश्यप को विदारने
वाले सम्पूर्ण विद्याओं के कर्ता नरसिंहजी
की स्थापना तथा बड़ी धूम धाम से उसकी
प्रतिष्ठा करने की तैयारी की। सूतजी बोले
कि हे ऋषिगणों! फिर उस ज्ञानगुणसागर
राजा इन्द्रद्युम्न ने उस मन्दिर तथा नरसिंह
जी की विधिपूर्वक बड़े समारोह से प्रतिष्ठा
कर श्रीनरसिंह जी का स्तव नारद के सहित
करने लगा। सूतजी बोले कि हे ऋषियों!
फिर नारदजीने कहा कि हेराजन्! अब इसमें
एक बृहत् यज्ञशाला बनवाना चाहिए जिसमें
सौ अश्वमेध यज्ञ की सामग्री आजांय और
सम्पूर्ण कार्य हो सकें। नारद के आज्ञाधारी

राजा इन्द्रद्युम्न ने वैसीही एक वृहत् यज्ञशाला व यज्ञ कर महान् तेज वा कीर्ति पा सातरात्रि खड़े हो भगवान का स्तव करने लगा तब उसने अन्तिम दिवस के तीसरे पहर में सुन्दर२ वनपुष्पमालोंसे सुशोभित शंख, चक्र, गदा, पद्म धारण किए रक्तवर्ण क्षीरसाई सुमनोहर भक्तवत्सल कल्पवृक्ष विष्णु भगवान को सुन्दर रत्न जटित स्वर्ण सिंहासन पर श्रीलक्ष्मीजी के सहित बैठे देखा और उसके दक्षिण पार्श्व में हल धर भगवान हैं जिनकी छत्र छाया सहस्र मुख धारी फणीश करते थे। ज्ञान वैराग्य को बढ़ानेवाले देवता ऋषियों से संपूज्य भगवान को स्वप्न में देख अपने भाग्य को सराह अपने यज्ञ को सुफल समझ वारंवार उस नृमूर्ति का ध्यान अपने हृदय में धरने लगा। सूतजी बोले कि हे विप्रवरों ! राजा इन्द्रद्युम्न ने फिर यह सविस्तर हाल ब्रह्मा के पुत्र नारदमुनि जी से कहा। नारद मुनि सम्पूर्ण हाल सुन कर बोले कि हेराजन् ! आज तुम्हारे यज्ञ सुफल हुए

और अब तुमको कल प्रातःकाल अरुणोदय के समय श्रीदारुमय भगवान के दर्शन भी होंगे। ऐसा सुन राजा बड़ा प्रसन्न हुआ और वारंवार नारद मुनिजी के चरण तले पड़ने लगा। सूतजी बोले कि हे ब्राम्हणों! नारद जी की आज्ञानुसार राजा बड़े प्रातःकाल अरुणोदय से पूर्व स्नानादि से निवृत्त हो नारद मुनिजी के पास जा पहुँचा। नारद मुनिजी राजा को साथ ले समुद्र तटपर जा पहुँचे और नारद मुनिजी के कथनानुसार जिस प्रकार पूर्व स्वप्न में दर्शन हुए थे उसी प्रकार आज साक्षात् विष्णु भगवान के दर्शन कर राजा बड़ा प्रसन्न हो नारदजी को दिखाने लगा तब देव स्वरूप तृकालज्ञ सर्वगति नारदजी हँस कर बोले कि हे राजा! यह तुम्हारे बड़े भाग्य हैं, कल जिन श्वेतद्वीपवासी भगवान को तुमने स्वप्न में देखा था वही आज तुम्हारी भक्ति में बद्ध हो कर यहां आ तुमको चर्मचक्षुओं द्वारा दर्शन देरहे हैं। सूतजी बोले कि हे ऋषिगणों! फिर नारद

मुनिजी की आज्ञानुसार यज्ञका अविशिष्ट कार्य्य (ब्राम्हण भोजनादि) समाप्त कर उस यज्ञवेदी में यज्ञेश भगवान की स्थापना तथा पूजनादि कर नारदमुनिजी से बोला हे प्रभो! भगवान की दारुमय (काष्ट) मूर्ति कैसे किस तरह बनेगी सो कृपाकर मुझ से कहिए । तब नारद मुनिजी बोले कि हे पृथ्वीराज ! भगवान की अन्यान्य व असंख्य मूर्त्तियां हैं, तुम किस प्रकार कौन मूर्त्ति बनाने की इच्छा करते हो सो हम नहीं कह सकते । नारदजी की इतनी बातें सुनतेही आकाशवाणी हुई कि हे राजन् ! तुम बड़े बुद्धिमान तथा ज्ञानमान हो । नारदजी से इस प्रश्न को गुप्त रीति से पूंछना उचित है । हेराजन् ! महावेदी में सम्पूर्ण जगत के स्वामी स्वयम् अपनी इच्छा से अवतीर्ण होंगे और तुम एक पक्ष अर्थात् पंद्रह दिन तक इस वेदी को बन्द कर इस के बाहर जाकर उत्सव करो और जब तुमको कोई बड़ा लंबा चौड़ा मनुष्य अस्त्र शस्त्र धारण किए मिले तो उसको

इसके अन्दर भेज कर बाहर से द्वार बन्द करके पंद्रह दिन तक बाहर रहना और इसके द्वार तथा चारों ओर नाना प्रकार के वाद्यादि बजवाते रहो कि जिसमें प्रतिमा गढ़ने का शब्द किसी को सुनाई न पड़े। इस प्रतिमा के बननेका शब्द सुनन तथा दर्शन करने से देश तथा राजा की बड़ी हानि होगी और सम्पूर्ण नर्कगामी होंगे और नाना प्रकार की उपाधियां दुर्भिक्ष महामारी आदि पैदा होंगी इसलिए इसका सम्पूर्ण रीति से सावधान हो कार्य करो। देववाणी को सुनकर राजा ने बड़े द्वारपालों को अनेक प्रकार के वाद्य शंख, भेरी, दुन्दुभी, नगाड़े आदि बजाने को दे दिए और सम्पूर्ण नगर में वाद्यों के शब्द से कोलाहल मचगया उसी समय साक्षात् भक्तवत्सल भगवान बढ़ई का स्वरूप धारण कर अस्त्रशस्त्र लिए राजा इन्द्रद्युम्नके पास आए, राजा ने देववाणी के कथनानुसार उनको उस मन्दिर के भीतर कर द्वार बन्द करवादिए ॥

॥ इति जगदीश महात्म्य तृतीयोऽध्यायः ॥

अथ चतुर्थ अध्याय।

इतनी कथा सुन नैमिषारण्यवासी मुनिगण अत्यन्त प्रसन्न हो बोले कि हे सूतजी महाराज फिर राजा इन्द्रद्युम्न ने क्या किया सो आप सम्पूर्ण हाल हमलोगों से कहिए तब सूतजी बोले कि हे ऋषिगणों ! राजा इन्द्रद्युम्न ने आकाशवाणी के कथनानुसार सम्पूर्ण काम किया और वहां पर सुन्दर सुन्दर सुगन्धित पुष्प तथा उत्तम २ गन्धयुक्त पवित्र मन्दाकिनी गंगा से संमिलित कमल बरसने लगे और मन्दिर के बाहर सुन्दर २ नृत्यगान वाद्य तथा वेद पाठादि ध्वनि होने लगी। इसी प्रकार पंद्रह दिन बीतने पर स्वयंभू ईश्वर दारुमय, बलभद्र और आदिशक्ति सुभद्रा और अपने सुदर्शन के सहित चार रूपसे प्रगट हुए। राजा इन्द्रद्युम्न के यज्ञमें बुलाए हुए इन्द्रादिक देवता इस कार्य्य को देखने के निमित्त अपना अपना गृह त्याग पंद्रह दिन वहांही रहगए और भगवान का दारुमय रूप धारण करना सुन

भगवान के निमित्त अपने अपने आसन पर बैठ भजन करने लगे । भगवान को चाररूप से प्रगट देख संपूर्ण देव तथा नारदजी महाराज अनेक प्रकार भगवान की स्तुति आदिकर शाष्टाङ्ग दंडवत कर राजा इन्द्रद्युम्न को सराहने लगे और अपना अपना अभीष्ट वर पा संपूर्ण देवता राजा इन्द्रद्युम्न से बिदा मांग अपने अपने स्थान को चले गए । तब राजा ने भगवान की अनेक प्रकार स्तुति की। सूतजी बोले कि हे ऋषिगणों ! तब नारदजी तथा राजा इन्द्रद्युम्न ने अनेकानेक विद्वान पण्डित गुणियों को बुला भगवान के अनेक स्तोत्र पाठादि बनवा भगवान का विविध प्रकार पूजन किया और नारदजी बोले कि हे राजन् ! यह विष्णु भगवान तुम्हारे लिए यहांपर स्वयम् दारुमय रूपसे प्रगट हुए हैं, तुम्हारे ऐसा भाग्यवान् और कौन होगा कि जिसके लिए साक्षात् महाविष्णु दारुमय रूप धारण कर स्वयम् प्रकाश हुए हे राजन् ! अब इन विष्णु

भगवान के द्वारा संसार का बड़ा उपकार होगा और इनकी कृपा से संसार के यावत् प्राणी इनके दर्शनादि कर सुलभ में मोक्ष पदको पावेंगे। सो हे राजन्! अब तुम इन विष्णु भगवान के लिए इस कल्पवृक्ष के समीप एक सुन्दर शुद्ध विशाल मन्दिर बना उसकी प्रतिष्ठा ब्रह्माजी द्वारा कर इन दारुमय ब्रम्ह को वहाँ बैठा इनको संसार में विख्यात करो और यहीं पर भगवान का भोग तथा स्नान मंडप आदि भी बनाओ जहांपर परब्रह्म स्वरूप दारुमय सम्पूर्ण भोग विलास किया करेंगे। नारदमुनि की इतनी बातें सुन राजा इन्द्रद्युम्न ने विश्व कर्मा तथा अन्यान्य कारीगरों को बुला एक सुन्दर विशाल मन्दिर बनाने के लिए आज्ञा दी। राजा की आज्ञा सुन समस्त कार्यकर्ता गण अत्यन्त प्रीति तथा उत्साहसे उस मन्दिर को बनाने लगे। राजा तथा नारदजी की आज्ञानुसार सुन्दर विशाल मन्दिर तथा उसके भीतर अनेक भोग स्नान आदि की वेदियां

और उसके चारों ओर सुन्दर विशाल चार फाटक लगा अत्यन्त सुन्दर अमर प्रशंसनीय अलौकिक मन्दिर बना दिया जिसके देखने से इन्द्रादि देवता तथा बड़े बड़े कारीगर लोग भी लज्जित होगए। उस मन्दिर के तयार हो जाने पर राजा इन्द्रद्युम्न ने दारुमय भगवान की पूजादिकर और उनकी पूजा तथा संरक्षणादि के लिए विश्वावसु, विद्यापति तथा अपने मन्त्री आदियों को रखकर आप पुष्पक विमान में नारदमुनि को ले ब्रम्हलोक में ब्रम्हा के लेने के लिए चला और वहां ब्रह्मलोक में ब्रम्हाजी के स्थान पर जाकर देखा कि चारों ओर रत्न जटित नानाप्रकार पताका और अन्यान्य प्रकार के सुमनोहर वीणादि वाद्य बज रहे हैं और द्वारपर इन्द्रादिक सम्पूर्ण देवता अपने अपने वाहन सहित खड़े हैं। नारद मुनिजी दूरही से इस कौतुक को देख सुमनोहर हास्य मुख से आगे को जानेलगे। मृत्युलोक के राजा इन्द्रद्युम्न को साथ लेकर जाते हुए नारदजी को

देख द्वारपाल ने रोका और कहा कि हे महाराज ! इस समय किसी को जानेकी आज्ञा नहींहै । इतना सुन नारदजी बोले कि हे द्वारपाल ! तुम जाकर ब्रह्माजी को खबर जनाओ कि नारदजी इन्द्रद्युम्न राजाको लेकर आएहैं। नारदमुनिजी की बातें सुन द्वारपाल बोला कि हे महाराज ! आप ब्रह्मा के पुत्र हैं आपही जा कर पूंछिये। इस समय ब्रम्हाजी अपने ध्यान में निमग्न हो सामवेद से भगवान की स्तुति कर रहे हैं इस कारण मैं नहीं जा सकता, आप जाकर पूंछिये तब राजाको ले जाइएगा । नारदजी द्वारपाल की इतनी बातें सुन राजा इन्द्रद्युम्न को ड्योढ़ीपर छोड़ आप ब्रह्माजी के पास जा कृतांजली से दंडवत कर बोले कि हे महाराज ! आपके कथनानुसार मैंने राजा इन्द्रद्युम्न के यहां सब कार्य ठीकर करा दिया और अब राजा इन्द्रद्युम्न आपके लेने के लिए यहांपर आ द्वारपर खड़े हैं । नारद की बातें सुनकर ब्रह्माजी ने संकेत से राजा इन्द्रद्युम्न

को वहांपर ले आने के लिए कहा । ब्रह्माजी की संकेत आज्ञा सुन नारदजी राजा इन्द्रद्युम्न को ब्रह्माजी के पास ले गए । राजा इन्द्रद्युम्न ने ब्रम्हाजी को ध्यानमग्न बैठे देख साष्टाङ्ग दंडवत तथा अनेक स्तुति की और बोला कि हे ब्रम्हाजी महाराज ! आपकी कृपानुग्रह से हमारे सम्पूर्ण कार्य्य सफल और यज्ञ पूर्ण हुए और दारुमय ब्रम्ह भी आपकी कृपा से भूम-ण्डल में स्वयम् रूपसे प्रगट हुए हैं और उनका मन्दिर आदि सब बनकर प्रस्तुत हैं सो आप कृपाकर चलके उनकी प्रतिष्ठा आदि कर दीजिए । राजा की इतनी बातें सुन ब्रम्हाजी अपने कार्य्य से निवृत्त हो राजा की अनेक प्रशंसा कर बोले कि हे राजन् ! तुम्हारे पुण्य और यज्ञों के फल से यह सबकार्य्य सुगमता से पूर्ण हुए और साक्षात् परब्रम्ह परमेश्वर महाविष्णु स्वयम् दारुमय रूप धारण कर उपस्थित हुए । बृम्हाजी की इतनी बातें सुन राजा बड़ा प्रसन्न आनन्द में मग्न हो बृम्हा

जी से बोला कि महाराज ! यहसब आपही के चरणों की कृपाहै। सूतजी बोले कि हे ऋषिगणों बृम्हाजी तथा राजा की इतनी बातें होनेबाद दुर्वासा ऋषि ब्रम्हाजी के पास आ बोले कि हे महाराज प्रजापते ! आपके दर्शन के लिए इन्द्रादिक देवता आकर द्वारपर खड़े हैं। दुर्वासा की इतनी बातें सुन बृम्हाजी बोले कि हे ऋषि दुर्वासे ! यह राजा हमारी पाँचवी पीढ़ी का सत्वाधिकारी परम वैष्णव बड़ा ज्ञानी है, इसने अपने यज्ञादि द्वारा महाविष्णु भगवान की दारुमय मूर्त्ति उत्कल श्रीक्षेत्र में निर्माण की है जिसके द्वारा प्राणिमात्र सुलभमें मोक्ष पद पा सकेंगे। इतना कहकर ब्रह्माजीने सब देवता लोगों को बुलाने की आज्ञादी तब दुर्वासामुनि जी सम्पूर्ण देवताओं को लेजा ब्रह्माजी को दंड प्रणाम करने लगे और राजा इन्द्रद्युम्न भी सब को दंड प्रणामकर और सबका अनुशासन पा बैठगया तब ब्रम्हाजी बोले कि हे राजन्‌ इन्द्रद्युम्न ! तुम जाकर

मन्दिर के प्रतिष्ठा की तयारी करो मैं भीपीछे से आता हूं। ब्रम्हाजी का सुमनोहर शब्द सुन राजा बोला कि हे महाराज ! वहां सब सामग्री ठीक है केवल आपके चलने की देरी है राजा इन्द्रद्युम्न की इतनी बातें सुन बूम्हाजी फिर बोले कि हे राजन् ! तुम्हारा देश, राज तथा मन्त्री, सेना आदि सब नष्ट भ्रष्ट होगए हैं और अभी तक तुम्हारे देश में बहुत से राजा हो चुके और सब सामग्री भी नष्ट भ्रष्ट हो गई क्योंकि मन्वन्तरही बदल गया। सो हेराजन् ! वहां पर केवल भगवान की मूर्ति तथा मन्दिर के सिवाय तुम्हारा कुछ भी चिन्ह नहीं है। हे राजन् ! तुम शखनिधी, पद्मनिधी, तथा नारदमुनि जी को लेकर वहां जा सब तयारी करो तिस पीछे हम भी आते हैं। बूम्हाजी की इतनी बातें सुन बूम्हाजी को दंड प्रणाम कर सब मुनि तथा इन्द्रादिक सब देवता राजा इन्द्रद्युम्न के साथ नीलाचल (श्रीक्षेत्र) जगन्नाथ पुरी को चले।

इति जगदीशमहात्म्य चतुर्थोऽध्यायः समाप्तः॥

अथ पञ्चम अध्याय ।

ऋषि लोग बोले कि हे सूतजी महाराज! तब राजा इन्द्रद्युम्न ने सम्पूर्ण ऋषि तथा देवताओं के साथ जाकर उस नीलाचल क्षेत्र में क्या किया सो सम्पूर्ण हाल हम लोगों से कृपापूर्वक कहिए, सूतजी बोले कि हे ऋषिगणों! राजा इन्द्रद्युम्न ने इन्द्रादिक देवता तथा नारदादि ऋषियों के साथ वहां जाकर क्या देखा कि एक परम सुन्दर विशाल मन्दिर है जिसमें भगवान की मूर्ति भी स्थापित है और उसके चारों ओर उसके संरक्षकगण तथा भगवान के सेवक लोग विचरते तथा रहते हैं। राजा इन्द्रद्युम्न ने उस दारुमय भगवान का सूक्ष्मरूप पूजानादि कर महाविष्णु की अनेक प्रकार स्तुति कर पूंछा कि हे रक्षक लोगों! यह मन्दिर किसने बनवाकर इसमें भगवान की मूर्ति स्थापन की है? इतना सुन रक्षक तथा पुजारी लोग बोले कि हे महाराज! यहां के गालव नामक राजा ने इस मन्दिर का जीर्णोद्धार करके इस मन्दिर में

भगवान को स्थापन कियाहै। इतना सुनतेही राजा इन्द्रद्युम्न ने मन्दिर में घुस बलात्कार उन भगवान की मूर्ति को वहां से उठा उसके पश्चिम ओर बाहर लाकर रख दिया। राजा इन्द्रद्युम्न के इस बलात्कार को देख राजा गालव के रक्षक (सिपाही) लोगों ने वैतरणी नदी के तीरवासी राजा गालव से जा कहा कि हे महाराज! किसी एक राजा ने आपकी स्थापन की हुई भगवान की मूर्ति को उठाकर मन्दिर के पश्चिम ओर बाहर रखदिया है। राजा गालव इतना सुनतेही बड़ा क्रोधित हो अपना सैन्य सजा दलबल सहित पुरुषोत्तम क्षेत्र में आया और वहां पर इन्द्रादिक देवता तथा नारदमुनिजी को देख अति नम्रता से प्रणामकर पूंछने लगा कि हे महाराज नारदजी! आज यहां इन्द्रादिक सब देवता किस कारण पधारे और इस मूर्त्ति को भीतर से बाहर किसने स्थापित किया? राजा गालव की इतनी बातें सुनकर नारदमुनि जी बोले कि हेराजा

गालव ! मैं तुम से संपूर्ण कथा कहता हूं तुम चित्त लगा कर सुनो। यह राजा इन्द्रद्युम्न है, इसीने इस क्षेत्रका शोधन करा यहां नीलमाधव की इच्छा तथा आज्ञानुसार अपने यज्ञादियों द्वारा भगवान की दारुमय मूर्ति तथा इस विशाल मन्दिर आदि को बनवाया था। इसी मन्दिर की प्रतिष्ठा तथा मूर्ति स्थापन करने के लिए ब्रह्माजी को बुलाने गया था कि घूमते घूमते मन्वन्तर बीत गया इसी बीच में अनेक राजा तथा अनेक कार्य नवीन होगए तब ब्रह्माजी ने हम लोगों को साथ भेजा है कि फिर तुम उस नीलाचल को जा उस मन्दिर की प्रतिष्ठा तथा भगवान की मूर्ति स्थापन करने की सामग्री इकट्ठी करो सो हम सब इन्द्रादिक देवता ब्रह्मा जी की आज्ञा से यहां इसकी प्रतिष्ठा तथा भगवान की स्थापना करने की तयारी करने आए हैं और कुछ काल बाद ब्रम्हाजी भी इसकी प्रतिष्टा कराने के निमित्त आवेंगे क्योंकि किसी समय ब्रम्हाजी ने भगवान से इस मन्दिर की

प्रतिष्ठा करवाने का वरदान मांगा था, वही वरदान आज पूरा होगा । नारदमुनि जी की इतनी बातें सुन राजा गालव लाज्जित हो राजा इन्द्रद्युम्न को सम्पूर्ण राज्य सौंपकर राजा के पीछे बैठ गया तब राजा इन्द्रद्युम्न ने नारदमुनि जी की आज्ञानुसार उस मन्दिर का पुनः संस्कार तथा संपूर्ण सामग्री मन्दिर की प्रतिष्ठा के लिये मंगाई और नाना प्रकार की कारीगरी तथा मणि आदियों से शोभित तीन रथ और उनके लिए सुन्दर सुन्दर नाना आभूषणों से आलंकृत अश्व (घोड़े) सजा भगवान के पुनरागमन के लिए स्तुति करने लगा इतनेही में जगत के प्रपिता प्रजापती चतुर्मुखी बृम्हा जी श्वेताम्र तथा श्वेतालंकृत दोनों पार्श्व में सावित्री वा सरस्वती से विभूषित सुन्दर रत्न जटित सिंहासन पर बैठे बृम्हलोक से आए। बृम्हाजी का आगमन देख समस्त सभा मंडली उठकर बृम्हाजी को अभिवादन करने लगी। बृम्हाजी ने सब को यथोचित उत्तर दे सन्तोषित

किया तब नारदमुनी जी ने चारों ओर परिक्रमा कराके बूम्हाजी को सम्पूर्ण सामग्री तथा सम्पूर्ण स्थान दिखाए राजा इन्द्रद्युम्न की समस्त सामग्री को देख बूम्हाजी अत्यन्त प्रसन्न हो बोले कि हे राजन् ! तुम्हारा सम्पूर्ण कार्य्य अतीव प्रशंसनीय है क्योंकि इतने बड़े स्थल में कहीं किसी प्रकार की त्रुटि नहीं। ऐसा कहकर बूम्हाजी नारदादि मुनियों को साथ ले भगवान दारुमय परबूम्ह, बलभद्र, सुभद्रा के सहित रथों में बैठा प्रणाम कर आनन्द मग्न हो सामदेव से भगवान और ऋग्, यजु, तथा अथर्ववेद से सुभद्रा, बलभद्र और सुदर्शन चक्र की स्तुतिकर रथ में घुमा मन्दिर की प्रतिष्ठा की तदनन्दर सुन्दर मणि जटित सुमनोहर वेदी में प्रथम बलभद्र सुभद्रा तथा भगवान जगन्नाथ और उनके बगल में सुदर्शनचक्र को स्थापित कर नानाप्रकार के पूजनादि से महाभिषेक कर एकसहस्त्र विष्णुमहामन्त्रराज का जप किया । बूम्हाजी के महामन्त्र जप करने से नरसिंह

भगवान ने स्वयम् प्रगट हो अपना परम पावन, दुष्टनाशन, त्रैतापहारण, विकट रूप दिखाया जिसके देखने से बहुत लोग भयभीत हो पलायन करने लगे तब सबको बृम्हाजी ने श्रीनरसिंह भगवान का स्वरूप तथा उनका गुणानुवाद कहकर समझाया तब सबलोग नरसिंह भगवान की स्तुति पाठादि करने लगे ।

इति जगदीशमहात्म्ये पञ्चमोऽध्यायः समाप्तः ॥

अथ षष्ठम अध्याय ।

तब बृम्हाजी बोले कि हे प्रभो ! आप जगदाधार परबृम्ह सृष्टि के आदिकर्ता हो, आपही की निःश्वास वायु से निकले हुए (ॐ तत्सत्) शब्द से चारों वेद तथा संसार की उत्पत्ति पालन तथा कुछ अंश लेकर हम (बृम्हा, विष्णु, महेश) इस कार्य्य के अधिकारी हैं । आप अभेद्य, अचिन्तनीय, अनीह, सच्चिदात्मा, वेदान्तस्वरूप हो । आपकी माया तथा गुणानुवाद संसारी जीव क्या देवता लोग भी नहीं कह

सकते एतादृश आपको हमारा कोटानुकोटि प्रणाम है । सूतजी बोले कि हे मुनिगणों ! इसीप्रकार ब्रह्माजी ने नानाप्रकार महा विष्णु भगवान जगन्नाथ स्वामीजी की स्तुति की और वारंवार दंडवत करते हुए बोले कि हे भक्तवत्सल प्रभो ! आप सर्वत्र सर्वदा सम्पूर्ण स्थानों में व्याप्त तथा प्रतिष्ठित हो, आपकी प्रतिष्ठा कौन कर सकता है परन्तु भक्तों को उद्धार तथा संतुष्ट करने के लिए आप नाना प्रकार के स्वरूप धारण कर भक्तों को अभय वर प्रदान करते और उनकी इच्छानुसार लीला कर उनको सुख देते हो,आपकी लीला आदिको आपही जान सकते हो हमलोग आपकी संसारी माया के बन्धन में दिनरात पड़े रहते हैं । सूतजी बोले कि हे ब्राम्हणों ! ब्रम्हाजी ने दारुमय भगवान के मन्दिर की और वैशाख शुक्ल ८ अष्टमी गुरुवार श्री नरसिंहजी के मन्दिर की प्रतिष्ठा कर राजा इन्द्रद्युम्न को वहां का राज्य दिया । राजा इन्द्रद्युम्न को रज्य सिंहा-

सन पर बैठे देख दारुमय भगवान(श्रीजगन्नाथ) जी महाराज ईषत्हास्यमुखसे बोले कि हे राजन् ! तुमने हमारे लिए अपना राज्य पाट कोष संपत्ति आदि गंवा कर हमारे निमित्त नाना प्रकार के कष्ट उठाए और तीनों लोकों से भी पवित्र सुन्दर अति विशाल देव प्रशंसनीय हमारा मंदिर बना बिख्यात किया सो हे राजन् ! अब तुमको जैसी इच्छाहो वैसा वरदान मांगो हम तुमसे बड़े प्रसन्न हैं। इतना सुन राजा इन्द्रद्युम्न बोला कि हे महाराज ! आप की कृपा से सम्पूर्ण आशा पूर्ण हुई अब आपसे यही वरदान मांगता हूं कि जन्म जन्मान्तर आप के चरणकमलों में अविचल भक्ति बनी रहे, भगवान अति प्रसन्नता से एवमस्तु (ऐसाही हो) कह कर राजा से कहने लगे कि हे राजन् ! यह वरदान तुमको दे कहते हैं कि आज से ब्रह्मा के द्वितीय प्रहरार्ध अर्थात् दूसरे पहर तक हम तुम्हारी इच्छानुसार यहां इसी रूप से अति प्रसन्नतासे वास

करेंगे सो तुम हमारे कथनानुसार हमारी पूजा का प्रबन्ध करो जिसमें यह तुम्हारी यश कीर्त्ति सदैव एकसी बनी रहे । तुम्हारे यज्ञादि तथा नारदजी के पूजनादि से ज्येष्ठ शुक्ल पौर्णिमा को मैं स्वयम् अवतीर्ण हुआ परन्तु वह मेरा जन्म दिन नहीं क्योंकि मैं जन्म मरण से रहित सर्वमय एक स्वरूप हूँ सो उस ज्येष्ठ शुक्ल पौर्णिमा को हमारा स्नानादि करा विधि पूर्वक पूजनादि कर हमको १५ पंद्रह दिन के लिए हमारे पट बन्द कर देना जिसमें कोई हमारा दर्शन १५ दिन तक न कर सके इन पंद्रह दिन के भीतर जो कोई हमारा दर्शन करेगा वह नर्कगामी होगा और इसके बाद आषाढ मास शुक्ल पक्ष द्वितीया पुष्य नक्षत्र के दिन हमारी रथयात्रा और आषाढ शुक्ल एकादशी को हमारा शयन और श्रावण शुक्ल पौर्णिमा को हमारा बीर उत्सव तथा भाद्र सुदी एकादशी को हमारा पार्श्व परिवर्त्तन (करवट फिरना) और कार्त्तिक शुक्ल ११

को हमारा उत्थापन (उठाना) मार्गशीर्ष शुक्ल षष्ठी को हमारा सुन्दर वस्त्राभूषणादि से शृङ्गार तथा पौष शुक्ल पौर्णिमा को हमारा पुष्पाभिशेक और उत्तरायण मकर संक्रांति को यथाविधि मघोत्सव तथा फाल्गुन शुक्ल पौर्णिमाको डोलोत्सव (हिंडोला) और चैत्र शुक्ल चतुर्दशी को हमारा दमकापर्ण तथा वैशाख शुक्ल तृतीयाको चन्दनयात्रा अर्थात् हमारे शरीर में सुगन्धयुक्त चन्दन लेपन कर जल भ्रमण आदि प्रति वर्ष यह हमारे कहे हुए बारह उत्सव कराना इसकेलिए हम अपने प्रतिनिधि ग्यारह मूर्तियां देते हैं। उनकी स्थापना करो और रथयात्रा में हम स्वयम् अपनी वेदी से उठ कर ७ दिन में घूम तथा गुड़िचा यात्रा किया करेंगे, इतना कह भगवान दारुमय स्वरूप चुप हो बैठे और राजा इन्द्र-द्युम्न ने भगवान के कथनानुसार उन भगवान की एकादश मूर्तियों के मन्दिर बना प्रतिष्ठा कर बैठा दिया और उनकी ११ यात्राओं के

लिए भी अलग अलग स्थान बनवा दिए और प्रतिवर्ष उसमें विधिवत् भगवान की यात्रा करने लगा और रथयात्रा के लिए प्रति वर्ष सुन्दर नानामणियुक्त रथ भगवान, सुभद्रा तथा बलभद्र के लिए बनवा समस्त परिजन तथा सैन्य वा अन्यान्य नगरवासियों को समारोह से रथ में चढ़ा अनेक प्रकार के गीतवाद्य आदि से भगवान की रथयात्रा उत्सव करने लगा जिसके दर्शनादि के लिए महानऋषि तथा देवता व हरिभक्त लोग आने लगे। सूतजी बोले कि हे मुनिगणों ! इस प्रकार राजा इन्द्रद्युम्नके कार्य्य को देख इन्द्रादिक देवता तथा ब्रह्माजी महाराज इन्द्रद्युम्न को अनेक प्रकार धन्यवाद तथा आशिर्वाद दे श्री विष्णु भगवान, सुभद्रा तथा बलभद्र जी के चरण स्पर्श कर जयजयकार करते हुए अपने २ स्थान को चले गए ॥

॥ इति जगदीशमहात्म्य षष्ठोऽध्यायः समाप्तः ॥



अथ सप्तम अध्याय ।

तब सूतजी बोले कि हे ऋषिगणों ! यह सब कथा मैंने नीलमाधव तथा दारुमय भगवान की कही अब उनके दर्शन की विधि कहता हूं चित्त लगाकर सुनो । प्रथम मार्कण्डयतीर्थ (तालाव) में स्नानकर श्रीमार्कण्डेश्वर महादेव का दर्शन कर भगवान के मन्दिर में आ सुन्दर भगवान के मन्दिर के ऊपर जो नील-चक्र है उसको नमस्कार करे और फिर अक्षय वट वृक्ष की परिक्रमा कर विघ्नेश गणेशजी का दर्शन करे और इसी प्रकार वटेश्वर (वट कृष्ण) मङ्गलादेवी, क्षेत्रपाल, नरसिंहजी, विमलादेवी, पातालेश्वर उसके बाद उसी मन्दिर के भीतर जो भुवनेश्वरजी का मन्दिर है उनके दर्शन पूजनादिकर ईशानेश्वर, गरुड़ तथा भगवान के द्वारपाल जय विजय का दर्शन पूजानादिकर जय और विजय से भगवान के दर्शन के लिए प्रार्थना स्तुतिकरे तदनंतर परम पवित्र त्रैतापहारी महाविष्णु, लक्ष्मीजी और

शेष भगवान तथा सुदर्शनचक्र के सहित श्री बलभद्र, श्रीसुभद्रा श्रीजगन्नाथस्वामी जी का दर्शन पूजनादिकर भगवान के स्तोत्र पाठादि पढ़े, हे मुनिगणों ! इस प्रकार श्रीजगन्नाथजी के दर्शन करने से एक एक पद में एक एक अश्वमेध यज्ञका फल प्राप्त होता है। इसलिए यह यात्रा मैंने संसार के उपकार और आपके स्वार्थ के लिए आपसे कही ।

॥ इति जगदीशमहात्म्य सप्तमोऽध्यायः समाप्तः ॥

अथ अष्टम अध्याय ।

नित्य इतने दर्शन कर श्री भगवान का महाप्रसाद भक्षण करे और तीन रात्रि निवास तथा तीर्थराज (समुद्र) के दर्शन स्नान, यज्ञ पुर (जनकपुर) का दर्शन और वहां के देव लोगों का पूजन, ब्राह्मणभोजन तथा तीर्थराज पर पितृ श्राद्धादि कर श्वेतगंगा में जा उनसे अपने सब पापों की क्षमा मांग स्नान वा मार्जन कर वहां के श्वेतमाधव आदिका दर्शन

करे और फिर उग्रसेन आदि का दर्शन कर श्रीहनुमानजी का दर्शन कर तीर्थराज समुद्र की प्रार्थना तथा संकल्पादि कर लोकनाथ, इन्द्र-द्युम्न सरोवर, नीलकण्ठ, यमेश्वर, कपालमोचन आदि का दर्शन पूजनादि करता हुआ घरकी राह ले और मार्गस्थ सम्पूर्ण देवता, महानदी को प्रार्थना दर्शन कर घर आ भगवान के प्रीत्यर्थ हवन ब्राम्हण भोजनादि करावे हे मुनिगणों! इसी प्रकार पंचमी को जो लोग दर्शन वा प्रदक्षिणा करेंगे उनको अनेक गोदान तथा वाजपेय यज्ञका फल प्राप्त होगा और हे मुनिगणों! इसी प्रकार जो श्रीमहाविष्णु दारुमय ब्रम्हका निर्माल्य अर्थात् महाप्रसाद भक्षण करते हैं उनके सम्पूर्ण पाप नाश हो बुद्धि निर्मल, शरीर शुद्ध और काया का कल्प हो जाता है और हे मुनिलोगों! यह प्रसाद देवताओं को भी दुर्लभ है और ऐसे शुद्ध पवित्र महाप्रसाद को यदि शूद्र भी स्पर्श करलें तो भी ब्राम्हण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्रादि चारों वर्ण

तथा चारों आश्रम (गृहस्थ, ब्रह्मचारी, सन्यासी, वाणप्रस्थी) को गृहणीय है। इस प्रसाद को भक्षण करने से सम्पूर्ण यज्ञ, तीर्थ, क्षेत्रादि का दर्शन स्नानादि फल प्राप्त होता है, सो हे मुनिगणों ! ऐसे सुन्दर जगदीश के महाप्रसाद को पातेही बिना किसी तर्क वितर्क वा विचार किए खालेना उचित है। इस महाप्रसाद से दैत्य, देवता, पितर आदि सर्वदा सन्तुष्ट होते हैं और हे मुनिगणों ! इस महाप्रसाद को कदापि अग्राह्य न करना चाहिए अर्थात् बिल्ली, कुत्ते आदि का भी उच्छिष्ट मिले तो ग्रहण करले और देवता लोग ग्रहणकरते हैं। ऐसे महाप्रसाद की प्रशंसा कौन कर सकता है। हे मुनिगणों ! ऐसे उत्तम महाप्रसाद तथा इस क्षेत्र का जो महात्म कहा सो महात्म देवता लोगों को भी दुर्लभ है। जो इस महात्म को अच्छी प्रकार घर बैठे पढ़ेंगे वा सुनेंगे वह श्रीजगन्नाथ जी के दर्शन फल प्राप्त करेंगे और अन्तमें श्रीपुर में जा वास करेंगे। इतना सुन सम्पूर्ण ऋषि

लोगोंने श्री सूतजी महाराज को अनेक प्रकार पूजनादि कर बिदा किया और राजा इन्द्रद्युम्न भी सम्पूर्ण कार्य्यादि ठीक कर नारद जी के साथही साथ बूम्हलोक में उसी देह स्वरूप से चलागया।

॥ इति जगदीशमहात्म्य अष्टमोऽध्यायः समाप्तः ॥

शुभम्भूयात्



श्रीजगदीश अन्तर्गृही यात्रा ।

जिन आर्य सनातन धर्मावलम्बी यात्री लोगों को श्री जगन्नाथपुरी की अन्तर्गृही यात्रा करना हो वे प्रातःकाल अपने स्नानादि नित्य कर्मों से निवृत्त होकर भगवान जगन्नाथ जी के पूर्व अर्थात् सिंहद्वार को नमस्कार कर आगे बढ़ें तब द्वार के भीतर जा श्री पतितपावन जी और उसके आगे श्री काशी विश्वनाथके दर्शन कर तब भगवान के भोगमंडप तथा अजाननाथ विघ्नेश वटेश्वर और वटमंगला देवी जी का दर्शन करें और तिस पीछे अक्षयवट वृक्ष की परिक्रमा करके तदनन्तर पुरुषोत्तम, क्षेत्रपाल, नरसिंह तथा मुक्ति मंडप का दर्शन कर रोहिणी कुन्ड में मार्जन वा विमलादेवी का दर्शन पूजनादि करें और फिर सरस्वती, लक्ष्मी, अर्कक्षेत्राधिपतिसूर्य्य तथा पातालेश्वर, ईशानेश्वर महादेव तथा उत्तरायणी देवी का दर्शन कर श्री भगवान के दोनों चरण कमलों का तथा सुदर्शन चक्र का दर्शन कर

श्री जगन्नाथ स्वामी के दर्शन के लिए जग-मोहन मन्दिर में जा प्रार्थना करें और फिर गरुड़ के पीछे से द्वारपाल जय, विजय के दर्शन कर बलभद्र, सुभद्रा और जगन्नाथस्वामी तथा सुदर्शन जी का दर्शन पूजन स्तोत्र पाठादि कर महालक्ष्मी जी का पूजनादिकर वहां से चले और ब्रह्मभाग, कपालमोचन, नीलकण्ठ, यमेश्वर, बिल्वेश्वर, लोकनाथ मार्कण्डेयजी का दर्शन परिक्रमादि करके सम्पूर्ण देवता तथा पितरों का ध्यान करें। इस प्रकार श्री जगन्नाथपुरी की जो अन्तर्गृही यात्रा करेंगे वह इस लोक में सुख भोगकर अन्त में देवलोक को जावेंगे। इति—

—:o:—

महाप्रसाद भक्षण निर्णय।

आज कलके अनेक लोगों का मत है कि जगन्नाथ जी का महाप्रसाद हरेक व्यक्ति का स्पर्शीय (छुआहुआ) वा उच्छिष्ट (जूठा) खाना अयोग्य है परन्तु यदि हम अपने प्राचीन

सनातन धर्मानुसार श्रुति, स्मृति तथा पुराणों को मानें तो हमारे पुराणकृत महर्षि लोगों ने यहां तक लिखा है कि कुत्ते का उच्छिष्ट महाप्रसाद ग्रहण करने में भी दोष नहीं (कुक्कुरस्य मुखाद्भ्रष्टंतदान्नं पावनस्मतिम् । प्राप्त मात्रेण भोक्तव्यं नात्र कार्य्या वि-चारणम्) परन्तु आज कलके लोग इन सब को न मान अपनी नवीन प्रथानुसार यवनों (मुसलमान) को भी अपना सहकारी कार्य्य वाही बना उनको अपना सर्वस्व समर्पण कर देते हैं जिसको कि हमारे शास्त्रों में सबसे नीच लिखा है (न नीचात्यवनात्परः) परन्तु शुद्ध सच्चिदानन्द नीलमाधव के प्रसाद को ग्रहण नहीं करते हैं यह उनका परम अविवेक है परन्तु आजकल बहुतसी प्रथाएं यहां के लोलुपी लालचियो ने ऐसी डाली हैं जिनसे यात्रियों के धन, धर्म की हानि तथा ग्लानि होती है । वे यह हैं कि बहुत से लालची लोगों ने अपने स्वार्थवश जगदीश का महाप्रसाद कहकर अपने

घर वा मठका बनाया तेली तमोलियों का सिद्धान्न यात्रियों को खिलाना शुरूकिया है, अज्ञानयात्री लोग भी भक्ति श्रद्धा से उनको ग्रहण करते हैं ।

पुरी के पंडा ।

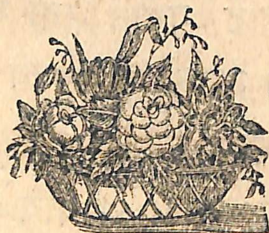
प्रायः सभी जगह के पंडा लोग प्रसिद्ध हैं परन्तु श्रीजगन्नाथ पुरी के पंडा लोगों की प्रसिद्धी अधिक है कि वह लोग यात्रियों के वस्त्र मोचन करने को उपस्थित वा कोई २ कर भी लेते हैं और वहां जानेवाले यात्रियों को प्रथम रेल से उतरतेही पंडा लोगों के चक्र में पड़ जो जो कष्ट उठाने पडते हैं वह उनके जन्म भर के लिए जगदीशपुरी के स्मरण चिन्ह हैं बहुत से पंडा लोग तो यात्रियों को कष्ट देनाही अभीष्ट समझते हैं उसका कारण यह है कि उन लोगों के देहाती मूर्ख गुमास्ते आदि यात्रियों के प्राण परायण हो राहु केतु की तरह चारों ओर से ग्रसते हैं परन्तु उनमें से बहुत से सभ्य लोग अपने ही अपने या-

त्रियों का स्वागत करते और उनको किसी प्रकार दुःख पाने नहीं देते हैं। यदि पुरी में देश २ के पंडा अलग अलग हैं परन्तु लालची पंडे लोग अपना स्वार्थ बढाने के लिये यात्रियों को कस कर अपना बनाना चाहते हैं। उनमें से बुद्धि मान गुणी यात्री लोग उन सबको सन्तुष्ट कर अपना स्वार्थ साधन करते हैं और बहुत से उनकी कसौटी में कसे जाते हैं। हमारा यह कथन नहीं है कि कोई किसी पर अरुचि करे परन्तु उनको प्रथम से ही अपने पंडा का नाम स्थानादि जानकर यात्रा करना चाहिए जिसमें किसी प्रकार का कष्ट न उठाना पड़े। ऐसे कष्ट प्रायः रईस लोग ही अधिक उठाते हैं और आशा है कि हम इसके तीसरे संस्कार में प्रत्येक जिला तथा शहर के पंडों का नाम लिख देंगे कि जिसमें यात्री लोगों को किसी प्रकार का कष्ट न हो इसमें बहुत से कष्ट तो हमारे सुयोग्य मैनेजर बाबू राजकिशोर जी ने निवृत कर दिए और आशा है कि वही इसपर और भी अधिक दृष्टि देते रहेंगे।

पुरी में अनर्थ ।

भारतवर्ष में जगन्नाथ पुरी अत्यंत पावन क्षेत्र गिना जाता है परन्तु इस क्षेत्र में २ । १ बातों का ऐसा अनर्थ है कि जिसको लिखे बिना रहा नहीं जाता इसमें बहुत लोगों को बुरा मालूम होगा परन्तु हमको सत्य लिखने में भय नहीं, हमारे शास्त्र का भी यही मत है (सत्योनास्तिभयंकत्रचित्) व अनर्थ यह हैं कि यहां के कई एक पंडा आदि यात्रियों के पूज्य शूद्र जाति हैं परन्तु उनको विदेशी अज्ञात ब्राह्मण आदि सम्पूर्ण उनको पंडा मान कर उनके पैरतक पूजते हैं । ऐसे धर्मक्षेत्र में ऐसा अनर्थ होना अन्याय है और वे लोग जगदीश की कोई पुनीत सेवा में ग्रहण नहीं किए जाते हैं । उनको कुलपूज्य मानना और अच्छे अच्छे कुलीन कर्मिष्ठ ब्राह्मणों को तिलांजली देना कैसा भारी अन्याय है क्योंकि भगवान जहां अवतार लेते हैं वहां केवल अपने वेद धर्म की रक्षा के लिए परन्तु इस स्थान

में यह प्रथा हमारे यात्रियों की अज्ञानता से हो गई है क्योंकि यहां का राज्य शासन तो बहुत दिनों से नाबालकों के कारण भ्रष्ट हो गया है और हमारी भारत गवर्नमेन्ट किसीके धर्म विषय पर किसीको कुछ नहीं कहती इसी कारण ऐसी ऐसी भ्रष्ट प्रणालियां पड़गई हैं। इस की तीसरी आवृत्ति में तथा समाचारपत्रों द्वारा हमको इसका पूरा पूरा हाल देकर आन्दोलन कर इस भ्रष्ट प्रथा को तोड़देना उचित है। वहलोग उनसे धनद्रव्य आदि लें पर ब्राह्मण से श्रेष्ठ बनकर पैर पुजवाना उनका अन्याय है।





RAMGHAT

BENARES CITY.